ऐसे ही समय में हमें जीना है

रोबेर्तो फेर्नान्देज़ रेतामार से साक्षात्कार



1930 में जन्मे रोबेर्तो फ़र्नान्देज़ रेतामार क्यूबा के प्रमुख कवि समालोचक और निबन्धकार। क्यूबा की क्रान्ति से घनिष्ठ रूप से जुड़े रहे। रचनाओं का अंग्रेज़ी, फ्रांसीसी, इतालवी, पुर्तगाली, जर्मन और अन्य अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है। वे 1955 से हवाना विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर हैं। अमेरिका के येल विश्वविद्यालय में अतिथि प्रोफ़ेसर के रूप में काम किया और साथ ही अमेरिका के अन्य विश्वविद्यालयों तथा यूरोप के विभिन्न विश्वविद्यालयों में व्याख्यान भी दिए। 'कासा दे लास अमेरिकास' नामक क्यूबाई सांस्कृतिक संस्था के अध्यक्ष हैं और 1965 से उसकी प्रमुख पत्रिका के सम्पादक भी रहे हैं।

फ्रांस के क्यूबाई दूतावास में सांस्कृतिक सलाहकार के अलावा क्यूबा के कथाकार-लेखक संघ के सचिव और क्यूबा में मार्ती अध्ययन केन्द्र के निदेशक भी रहे।

निकारागुआ के कवि अर्नेस्तो कार्देनाल और चिली के निकानोर पार्रा के साथ रेतामार दक्षिण अमेरिका में संवादधर्मी कविता के प्रवर्तक माने जाते हैं। प्रमुख काव्य संग्रह :

1 'प्राचीन आशा की वापसी' (1959), 2 'समानान्तर नोट बुक' (1973), 3. परिवेश और खुराना (1980)। चुनी हुई कविताओं का एक संग्रह स्पेन में भी छपा है।

अनेक महत्वपूर्ण निबन्ध संग्रह भी प्रकाशित हैं, जिनमें प्रमुख हैं :

1 स्पेनी-अमेरिकी साहित्य का सिद्धान्त (1975), 2 मनुष्य की सुनिश्चित रूपरेखा (1988), 3. सभ्यता और बर्बरता के ढंग (1988) और 4 कालिबन तथा अन्य निबन्ध (1989)।

ऐसे ही समय में हमें जीना है

रोबेर्तो फेर्नान्देज़ रेतामार से
जोफ्रेडो डायना और जॉन बेवरली का साक्षात्कार

अनुवाद
मैनेजर पाण्डेय

साक्षात्कार पुस्तिका

— **क्रिटिकल इन्क्वारी**
विन्टर 1995 से साभार

— इस अनुवाद में महत्वपूर्ण सहायता के लिए अनुवादक जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में स्पेनी के प्राध्यापक श्री अपराजित चट्टोपाध्याय का आभारी है।

डायना और बेवरली : शीतयुद्ध के अंत, समाजवादी समूहों के विघटन और मार्क्सवाद के राजनीतिक-बौद्धिक-संकट का व्यक्तिगत रूप से आप पर और आपकी 'कासा दे लास अमेरिकास' योजना तथा क्यूबा की क्रान्ति पर क्या प्रभाव पड़ा है ?

रेतामार : एक बार अपने एक पूर्वज के बारे में बात करते हुए बोर्खेज़ ने कहा था कि वह अन्य लोगों की तरह ही एक कठिन समय में जी रहा था। दक्षिण अमेरिका के विभिन्न देशों के लिए, क्यूबा की क्रान्ति के लिए और अमेरिकी संस्कृति की मेरी योजना के लिए **आज का समय अत्यन्त कठिन समय है। खासतौर से मेरे लिए तो यह और भी कठिन समय है क्योंकि मैं नैतिक रूप से अपनी जनता की नियति से खुद को अलग नहीं कर सकता।** अभी कुछ समय पहले तक हम लोग विश्वव्यापी संघर्ष और आशा के अनुभव से गुजर रहे थे। उस अनुभव को ठीक ढंग से वही समझ सकता है जो 1959 के पहले या बाद के क्यूबा के बाहर और भीतर की घटनाओं से पूरी तरह जुड़ा हो। अब हमारे जीवन का लक्ष्य उस अनुभव की स्मृतियों और भविष्य में उन अनुभवों की वापसी की उम्मीदों के साथ जीना ही है।

कुछ समय पहले जो शीतयुद्ध का वातावरण था, उससे आणविक युद्ध का खतरा

जुड़ा हुआ था, इसलिए कोई भी समझदार आदमी उसके अंत से दुःखी क्यों होगा? लेकिन उस शीतयुद्ध के अंत के बाद जो कुछ हो रहा है, वह चिरस्थायी शान्ति का लक्षण तो एकदम नहीं है। इस बीच पनामा पर अमेरिका का आक्रमण हुआ है, बाद में इराक ने कुवैत पर आक्रमण किया और उसके परिणामस्वरूप भीषण खाड़ी युद्ध हुआ। ये सारी घटनाएँ तब घटीं, जब सोवियत संघ का विघटन हो गया था और अमेरिका का विरोध करने वाली कोई शक्ति नहीं बची थी। क्या इन सब घटनाओं से यह साबित नहीं होता कि शीतयुद्ध का अंत स्थायी शान्ति की शुरुआत नहीं है, बल्कि शीतयुद्ध के अंत के बाद अब अमेरिकी साम्राज्यवाद को बेरोकटोक व्यवहार करने की छूट मिल गई है। **मैं जानता हूँ कि अब 'साम्राज्यवाद' शब्द पुराना पड़ गया है, उसकी चर्चा कम लोग करते हैं; लेकिन मैं उस शब्द से अधिक उसके अर्थ के बारे में चिन्तित हूँ, जो पहले से अधिक ख़तरनाक और ख़ूँखार हुआ है।** मुझे नहीं लगता कि पनामा, इराक, सोमालिया और सारायेवो में मारे जाने वाले लोग यह जानकर सुखी और संतुष्ट होंगे कि वे शीतयुद्ध के बाद मारे गये हैं या आणविक विनाश से बच गये हैं। मुझे इस प्रसंग में मैक्सिको में लोकप्रिय एक गीत की कुछ पंक्तियाँ याद आ रही हैं :

> 'जिस दिन वह मारी गई/रोशीता खुशनसीब थी/तीन गोलियों में से/केवल एक ही जान लेवा बनी।'

क्या आप समझते हैं कि जो एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका में करोड़ों लोग भूख से मर रहे हैं या तरह-तरह की बीमारियों से मर रहे हैं, वे इस बात से संतुष्ट होंगे कि शीतयुद्ध समाप्त हो गया है।

जहाँ तक महाशक्तियों की बात है तो उन्होंने जेफ्रे गॉर्टेन के शब्दों में शीतयुद्ध की जगह शीतशांति की स्थापना कर दी है। जेफ्रे गॉर्टेन ने समकालीन स्थितियों की व्याख्या करने वाली एक महत्वपूर्ण पुस्तक लिखी है, जिसका नाम है 'शीत शांति अमेरिका, जापान, जर्मनी और वर्चस्व के लिए संघर्ष ('अ कोल्ड पीस : अमेरिका, जापान, जर्मनी एण्ड द स्ट्रगल फॉर सुप्रिमेसी')। क्या यह शीतशांति 1914 से पहले उस समय की महाशक्तियों के बीच चलने वाली आर्थिक प्रतिद्वन्द्विता की याद नहीं दिलाती? **क्या हम एक अंतिम युद्ध की ओर नही बढ़ रहे हैं? क्या इससे यह नही लगता कि हम एक शीतयुद्ध से निकल कर दूसरे शीतयुद्ध में जीने-मरने के लिए मजबूर हैं?** पहले दो शक्तियों के बीच संतुलन की जो ख़तरनाक स्थिति थी, उसकी जगह अब जो एक शक्ति का वर्चस्व स्थापित हुआ है वह व्यापक मनुष्यता के लिए पहले से अधिक चिंताजनक हो गया है। जिन्हें फ्रेंज फ़ैनन 'दुनिया के बदनसीब' कहते थे या मार्ती 'दुनिया के दरिद्र'

कहते थे, उस मानव समुदाय के लिए आज की स्थिति पहले से अधिक भयावह हो गई है। **इस समय मानव समाज का जो इतिहास बन रहा है, उसमें अकाल, महामारी, बच्चों की हत्या, मानवीय अंगों का व्यापार, मादक द्रव्यों का सेवन, शहरों में दंगे, बड़े पैमाने पर पूरब से पश्चिम की ओर मजदूरों का पलायन और साथ ही तरह-तरह के जातिभेद, भेदभाव और पूर्वग्रहों की भरमार दिखाई देती है।** इन सबके परिणामस्वरूप क्या भविष्य मे मानवता को बाँटनेवाली ख़तरनाक स्थितियां पैदा नहीं होंगी? मैंने यूरोप में स्वास्तिक चिह्नों के खतरनाक खेलों को देखा है, इसलिए आजकल जर्मनी में तुर्कों पर जो आक्रमण हो रहे है, उनको देख-सुनकर निश्चित नहीं हो सकता।

जहाँ तक समाजवादी व्यवस्थाओं के विघटन का सवाल है तो 1917 में जारशाही के अंत के साथ जो महान सामाजिक प्रयोग हुआ था, उसके बारे में बहुत कुछ कहा और लिखा जा चुका है। **निश्चय ही यह समाजवाद की अब तक की सबसे बड़ी पराजय है।** इसके पहले 1871 के पेरिस कम्यून, 1905 की रूसी क्रान्ति और जर्मनी, हंगरी तथा स्पेन की क्रान्तियों की असफलताओं को देखिए तो पराजयों की एक सदी का इतिहास सामने आयेगा। अब केवल यूरोप के बाहर ही समाजवाद का अस्तित्व है, जैसे कि चीन, वियतनाम, कोरिया और क्यूबा में। **लेकिन क्या पूंजीवाद की स्थापना मे इससे अधिक लम्बा समय नहीं लगा है? अपने इतिहास में पूंजीवाद भी कई बार गतिरोध और पराजय का शिकार हुआ है।** ऐसा कहकर मैं रूसी क्रान्ति के प्रयोग की विफलता को झुठला नहीं रहा हूँ। हम सब लोग जानते हैं कि रूस में समाजवादी प्रयोग लम्बे समय से अनेक तरह की कठिनाइयों का सामना कर रहा था। मैं आत्मनिर्णय के सिद्धान्त में विश्वास करता हूँ, इसलिए किसी देश के बारे में यह कहना ठीक नहीं समझता कि उसे अतीत में क्या करना चाहिए था या भविष्य में क्या करना चाहिए? लेकिन हम यह सवाल तो कर ही सकते हैं कि क्या विभिन्न समाजवादी देशों की व्यवस्थाओं ने अपनी जनता को सचमुच आत्मनिर्णय का अधिकार दिया था? यह ठीक है कि पुरानी समाजवादी व्यवस्थाओं में समाजवाद के नाम पर अनेक तरह के मूर्खतापूर्ण और आपराधिक क्रियाकलाप हुए थे, फिर भी उन्हीं समाजों में अब जो एक-दूसरे का गला काटने वाली बर्बर घृणा फैल रही है, उसे क्या हम स्वीकार कर लें? भूतपूर्व सोवियत संघ के विभिन्न देशों में आजकल समाज के हर स्तर पर जो माफिया राज कायम हो रहा है, उसे क्या हम स्वीकार कर लें? या फिर पश्चिम के तथाकथित लोकतांत्रिक सरकारों की सहमति से रूस की संसद पर जो गोलाबारी हुई, उसे हम स्वीकार कर लें? या कि भूतपूर्व सोवियत संघ के परमाणु हथियारों से सम्पन्न विभिन्न राष्ट्रों के बीच युद्ध की संभावनाओं को बेफ़िक्र होकर देखते रहें?

समाजवादी व्यवस्थाओं के बिखराव के बाद पूंजीवादी व्यवस्था से विकासशील देशों के बचाव के सारे रास्ते बंद हो गए हैं। चे ग्वेरा ने 1965 में अल्जीरिया की घोषणा में कहा था कि अगर समाजवादी देश विकासशील देशों में उत्पादित वस्तुओं का वही मूल्य देंगे जो विश्व बाजार द्वारा तय होता है तो फिर वे पूंजीवाद के ही सहायक बनेंगे। क्यूबा ने ऐसा नहीं होने दिया। उसने सोवियत संघ और दूसरे समाजवादी देशों से ऐसा आर्थिक सम्बन्ध बनाया जो विकासशील देशों के बीच नयी अर्थव्यवस्था की स्थापना की ज़रूरतों के अनुकूल था, न कि आर्थिक सहायता पर आधारित, जैसा कि प्रायः हमारे विरोधी कहते हैं। अब वह समता पर आधारित सम्बन्ध समाप्त हो गया है और क्यूबा कई तरह की आर्थिक कठिनाइयों का सामना कर रहा है। इन कठिनाइयों में कुछ तो अमेरिका द्वारा क्यूबा की आर्थिक नाकेबन्दी से पैदा हुई हैं और कुछ भूतपूर्व समाजवादी व्यवस्थाओं के विघटन से। 1959 से ही संयुक्त राज्य अमेरिका ने हमारा जो घनघोर अनैतिक विरोध शुरू किया, उसके कारण भूतपूर्व समाजवादी व्यवस्थाओ से सबंध बनाने के अलावा क्यूबा के पास कोई विकल्प भी न था। हमने आरम्भ में स्वतंत्र नीति अपनाने की जो कोशिश की थी, उसे मजबूरी में बदलना पड़ा। भूतपूर्व समाजवादी व्यवस्थाओं के विघटन के बाद हमें पूरी तरह आत्मनिर्भर होना पड़ा है। अब हम, जैसी दुनिया की अर्थव्यवस्था है, उससे जुड़कर जाने के लिए कठिन संघर्ष कर रहे हैं। आज की दुनिया में पूंजीवाद नये उदारतावाद के सहारे अपने आन्तरिक संकटों से छुटकारा पाने में लगा है।

जहाँ तक मार्क्सवाद के संकट का सवाल है तो उसका सम्बन्ध एक ओर यूरोप मे समाजवादी योजना के समाप्त होने से है तो दूसरी ओर उस संकट का इतिहास उससे कुछ पुराना भी है। जैसा कि आप (जॉन बेवरली) जानते हैं कि दक्षिण अमेरिका में 1920 के आसपास मारियातेगुई ने मार्क्सवाद की इतिहास और राष्ट्रीय विकास से सम्बन्धित यूरोप केन्द्रित दृष्टि की आलोचना की थी। अन्तोनियो मेलिस ने मारियातेगुई को अमेरिका का पहला मार्क्सवादी कहा है। यद्यपि दक्षिण अमेरिका में मारियातेगुई से भी पहले मार्क्सवादी हो चुके हैं, लेकिन उसे हम पहला सच्चा दक्षिण अमेरिकी मार्क्सवादी कह सकते हैं जिसने हमारे इतिहास और परिस्थितियों के अनुकूल मार्क्सवाद को विकसित किया है। इस तरह अगर दक्षिण अमेरिका में मार्क्सवाद का संकट उसके पहले सच्चे प्रतिनिधि के साथ आज से साठ वर्ष पहले शुरू होता है तो हमें मानना होगा कि **संकट मार्क्सवाद से स्वाभाविक रूप से जुड़ा हुआ है। क्या ऐसा नहीं लगता कि जब मार्क्स ने कहा था कि वे मार्क्सवादी नही हैं तब वे पहले गैर-मार्क्सवादी मार्क्सवादी बने और संभवतः पहले उत्तर मार्क्सवादी भी; भले ही अब इस उत्तर मार्क्सवादी धारणा**

का जो भी अर्थ बन गया हो।

लेकिन आखिर मार्क्सवाद है क्या? अगर मार्क्सवाद वही है जो केवल मार्क्स की रचनाओं में मौजूद है तो केवल मार्क्स ही मार्क्सवादी होंगे, लेकिन उन्होंने तो कहा था कि वे मार्क्सवादी नहीं हैं। अगर मार्क्सवाद से हमारा तात्पर्य उन सब लोगो की रचनाओं, भावनाओं और व्यवहारों से हो जो अपने को मार्क्सवादी कहते हैं, तो फिर मार्क्सवाद बहुलतावादी, अंतर्विरोधों से भरा हुआ और स्थायी रूप से संकट में पडा हुआ माना जाएगा। समस्या तब और जटिल हो जाती है, जब हम यह जानते हैं कि एक पूरा अनुशासन जिसके मूल में द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद है, एक व्यक्ति की देन है। कल्पना कीजिए कि खगोल विज्ञान को अगर गैलीलियोवाद कहा जाता, तब उस विज्ञान के इतिहास के एक अध्याय में यह भी लिखा जाता कि किस तरह गैलीलियो ने चर्च के न्यायाधिकरण के सामने घुटने टेककर अपने उस विश्वास का खंडन किया जिसके अनुसार पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। सौभाग्य से खगोल विज्ञान के साथ ऐसा नहीं है, उसे गैलीलियोवाद नहीं कहा जाता, इसलिए गैलीलियो के अपमान की घटना उसकी जीवनी का एक हिस्सा है, न कि खगोल विज्ञान के इतिहास का। एंगेल्स ने कहा था कि मार्क्स से भी पहले लेविस हेनरी मोर्गन ने स्वतंत्र रूप से ऐतिहासिक भौतिकवाद के सिद्धान्तों की खोज की थी। यही नहीं, उससे भी पहले डैनियल डी लिओन ने अमेरिका में मार्क्सवाद को लागू करना शुरू किया था। लेकिन दूसरी ओर मार्क्स ने बोलीवार के बारे में जो कुछ लिखा है या मैक्सिको से अमेरिका के युद्ध के बाद मैक्सिको के एक बहुत बड़े हिस्से को अमेरिका द्वारा हड़प लिए जाने का समर्थन किया है— वह सब हमारे लिए अत्यन्त दुःखद है। लेकिन हम उसे मार्क्स की जीवनी का हिस्सा मानते हैं, न कि ऐतिहासिक भौतिकवाद का वैज्ञानिक सच या और कुछ। **इन बातों को मार्क्सवाद के संकट के रूप में समझना सही नहीं है, बल्कि इन्हें गलत व्यक्तिगत विचार या पूर्वग्रह कहना ठीक है।**

मैंने अब तक जो कुछ कहा है, उससे यह स्पष्ट हो गया होगा कि **मार्क्स और एंगेल्स ने ज्ञान के क्षेत्र में जो बुनियादी योगदान किया है, उसे मार्क्सवाद न भी कहा जाए तो कोई हर्ज नहीं है। उन्होंने अपने विचारों के विकास का दरवाजा बंद नहीं किया था और उनके यहां विचारों के सिद्ध अंत या बंद शास्त्र बनाने का प्रयास भी न था, बल्कि उन्होंने इतिहास से खुले संवाद के माध्यम से नई बौद्धिक खोजों और विचारो के विकास का रास्ता दिखाया था।** मार्क्सवाद को बंद शास्त्र बनाने का काम जड स्तालिनवादियों ने किया और बाद के दिनों में तथाकथित पश्चिमी मार्क्सवाद के प्रतिनिधियों ने।

अब सवाल यह है कि क्या मार्क्स, एंगेल्स के विचारों का कोई भविष्य नही है? क्या उनमें कोई संभावना मौजूद नही है? क्या मार्क्सवाद अब इतिहास की वस्तु हो गया है? इस प्रसंग मे मैं सार्त्र की उस राय से सहमत हूँ जो उन्होंने 'द्वन्द्वात्मक विवेक की मीमांसा' (क्रिटीक आफ डायलेक्टिकल रीजन) नामक पुस्तक में व्यक्त की है। सार्त्र की राय है कि **एक दर्शन के रूप में मार्क्सवाद का महत्व तब तक खत्म नही होगा, जब तक उन ऐतिहासिक परिस्थितियों पर विजय न प्राप्त कर ली जाए, जिनसे मार्क्सवाद पैदा हुआ था।** मैं यह जानता हूँ कि आजकल बहुत से लोग ऐसे विचारों को स्वीकार नहीं करते, लेकिन मैं सार्त्र की राय को स्वीकार करता हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि मेरी इच्छा के विपरीत लोग मार्क्सवाद के पक्ष, और विपक्ष में और साथ ही उसके सकट के बारे में आगे भी बात करते रहेंगे। ऐसे बाल की खाल निकालने वाले अनन्त शास्त्रार्थ में मेरी कोई दिलचस्पी नहीं है। **अगर हम यह नही जानते कि एक विशेष स्थिति में मार्क्सवाद का ठोस अर्थ क्या है, तो फिर हम यह भी नहीं जान सकते कि मार्क्सवाद के नाम पर किस बात पर आक्रमण हो रहा है या किसकी रक्षा की जा रही है या किसे संकटग्रस्त कहा जा रहा है? आजकल उत्तर मार्क्सवाद की खूब चर्चा हो रही है, लेकिन वे उत्तर मार्क्सवादी असल में भूतपूर्व मार्क्सवादी हैं या अभूतपूर्व मार्क्सवादी या फिर पूरी तरह गैर-मार्क्सवादी।**

> **डायना और बेवरली :** क्या क्यूबा एक समाजवादी देश के रूप में अपनी रक्षा कर सकता है? क्या आप समझते हैं कि यहाँ समाजवाद का अब भी कोई भविष्य है? क्या आप मार्ती के शब्दों में यह कहना चाहेंगे कि क्यूबा की स्थिति 'शैतान के पेट में जीने' जैसी है?

रेतामार : आजकल क्यूबा का लक्ष्य एक तो अपनी राष्ट्रीय प्रभुसत्ता की रक्षा है और दूसरे क्रान्ति की उपलब्धियों का बचाव। हमारे लिए यह समाजवाद का एक विशेष समय है। इसका तात्पर्य यह है कि हमारी समाजवादी योजना अब भी कायम है। हम न उसे छोड़ सकते हैं, न उसके बारे में कोई समझौता कर सकते हैं। लेकिन एक ओर सोवियत समूह के विघटन और दूसरी ओर अमेरिका की कठोर नाकेबंदी के कारण क्यूबा एक अत्यन्त कठिन और संकटपूर्ण स्थिति का सामना कर रहा है। इस स्थिति को लाने में कुछ भूमिका हमारी गलतियों की भी है क्योंकि हम अच्युत तो नहीं हैं। यह क्यूबा के लिए अनेक तरह की कमियों का समय है और इन कमियों को पूरा करने के लिए जो आपात्कालीन कदम उठाए जा रहे हैं, उन्हें समाजवादी कहना कठिन है लेकिन क्यूबा में क्रान्ति की सामाजिक उपलब्धियाँ अब भी जीवित हैं और वे उपलब्धियाँ ऐसी हैं, जैसी दक्षिण अमेरिका के पांच सौ वर्षों के इतिहास में पहले कहीं भी और कभी

भी नहीं रही है। मैं उन उपलब्धियों को गिनाना अनावश्यक समझता हूँ क्योंकि उन्हे हर आदमी जानता है, यहाँ तक कि हमारे दुश्मन भी। उन उपलब्धियों के साथ ही क्यूबा के समाज में समाजवादी लक्ष्य की निरन्तर उपस्थिति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। हमारे सामने सबसे बड़ा सवाल यह है कि जब तक हम समाजवाद के निर्माण के अगले कदम की ओर आगे बढ़ने की स्थिति में नहीं होते तब तक पहले की उपलब्धियों की हम रक्षा कैसे करें? कवि डन का एक अत्यन्त प्रसिद्ध कथन है कि "कोई भी मनुष्य नदी का द्वीप नहीं है।" इस कथन को ध्यान में रखकर हम यह भी कह सकते हैं कि कोई भी देश द्वीप नहीं है, भले ही वह क्यूबा की तरह भौगोलिक दृष्टि से एक द्वीप ही क्यों न हो। हमारे सामने कई सवाल हैं : क्या केवल एक देश में समाजवाद कायम रह सकता है? क्या एक ऐसे देश में समाजवाद कायम रह सकता है जिसकी आबादी लगभग सवा करोड़ हो? इतनी आबादी तो दुनिया के कई बड़े शहरों की है। जो देश पूरी दुनिया से अलग थलग नहीं रहना चाहता और एक खुली आर्थिक तथा सांस्कृतिक नीति पर चलना चाहता है, वह द्वीप की तरह कैसे जी सकता है? हमें अंतरराष्ट्रीयतावाद में पूरी तरह विश्वास करते हैं और पूरे मन से उसके अनुसार व्यवहार भी करते हैं। पिछले कुछ वर्षों में क्यूबा ने दुनिया के गरीब देशों में जितने डाक्टर भेजे हैं उतने विश्व स्वास्थ्य संगठन भी नहीं भेज पाया है। यद्यपि हमारा पहला कर्तव्य और लक्ष्य अपने समाजवादी समाज को बचाना है, लेकिन हम बाकी दुनिया की ओर पीठ नहीं कर सकते और बाकी दुनिया भी हमारी ओर से मुंह नहीं फेर सकती, बल्कि वास्तविकता यह है कि दुनिया के बहुत सारे देश हमारे साथ हैं।

जहाँ तक समाजवाद के भविष्य का सवाल है तो मैं यह कह सकता हूँ कि निश्चय ही समाजवाद का भविष्य है, बल्कि रेमण्ड विलियम्स के शब्दों में यह कहना ठीक होगा कि 'समाजवादों' का भविष्य है। कोई घनघोर निराशावादी ही यह कह सकता है कि हम जिस धूमिल और धुंधले वर्तमान से गुजर रहे हैं, वही इतिहास का अंत भी है। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि मैं कोई अतिरंजित आशावादी हूँ। मार्क्स ने यह नहीं कहा था कि पूंजीवाद के बाद समाजवाद जरूर ही आएगा, उन्होंने तो यही कहा था कि मानव समाज के सामने समाजवाद और बर्बरता के बीच चुनाव का सवाल है। आज के समय में पूरी दुनिया में असमानताओं, मुश्किलों, अपराधों, अन्यायों और अंतर्विरोधों की जो भरमार है वह पूंजीवाद की देन है। इन सबको देखते हुए मुझे लगता है कि समाजवाद का भविष्य है। जाहिर है कि जब मैं समाजवाद के भविष्य की बात कर रहा हूँ, तब समाजवाद से मेरा आशय वैसे समाजवाद से नहीं है जैसा वह सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप के देशों में था। संभवतः मैन्डल ने कहा था कि "एक चूहा निश्चय ही

वास्तविक चूहा ही है लेकिन उसे वास्तविक साड कहने का किसी को अधिकार नही हे।" मेरी आकांक्षा का भावी समाजवाद पहले की समाजवादी व्यवस्थाओं से अलग और बेहतर होगा, वह समाजवाद के सच्चे आदर्शों और सम्भावनाओं के अनुकूल होगा और वही वर्तमान के भयावह संकट से मनुष्यता को बचाएगा। आज की दुनिया के कुछ अमीर देशों की सम्पन्नता को देखकर दिग्भ्रमित होना ठीक नहीं है; क्योंकि एक तो उन अमीर देशों के भीतर भी गरीब कम नहीं हैं और दूसरे बाकी दुनिया में गरीबी की स्थिति अत्यन्त भीषण है। पूंजीवाद ने मनुष्यता का जिस तरह नाश किया है वह भयानक है। लगभग पाँच सदियों के अपने इतिहास में पूंजीवाद ने अनेक संस्कृतियों को पूरी तरह नष्ट कर दिया है, उसने अनेक देशों और समाजों के प्राकृतिक और आर्थिक साधनो का निर्मम शोषण करते हुए उन्हे अत्यन्त अराजक और दयनीय स्थितियों में डाल दिया है, उसने अपने प्रभाव से दासता, रंगभेद और लिंगभेद का विस्तार किया है, उसने दो महायुद्धों के माध्यम से बड़े पैमाने पर नरसंहार का आयोजन किया है और सबसे अधिक चिन्ता की बात यह है कि उसने हमारी धरती को इस तरह बर्बाद किया है कि भविष्य में इस पर रहना और जीना मुश्किल हो जाएगा। क्या हम ऐसी स्थिति से बाहर निकलना नही चाहेंगे? क्या इस स्थिति से निकलने का सबसे अच्छा रास्ता समाजवाद नहीं है?

जहाँ तक शैतान के पेट में रहकर मानवीय ढंग से जीने का सवाल है तो मैं कहूँगा कि इस कथन के पीछे एक तरह का गहरा ऐतिहासिक निराशावाद है। शायद आपका संकेत उस विचार प्रक्रिया की ओर है जो हर तरह की यूटोपिया और सामाजिक परिवर्तन के आन्दोलनों से मोहभंग की घोषणा कर रही है। मैं इस प्रसंग में अमेरिका से क्यूबा के सम्बन्ध की चर्चा करना चाहूँगा। **मै यह नहीं मानता कि अमेरिका हमेशा एक राक्षस ही बना रहेगा।** मार्ती के कथन में भी अमेरिका के इतिहास की एक विशेष अवस्था की ओर संकेत था। संयोगवश अभी उस अवस्था का अंत नहीं हुआ है। लेकिन अमेरिका जन्म से राक्षस नहीं था, बल्कि दुनिया के इस हिस्से में वह पहला देश था, जहाँ स्वाधीनता के लिए क्रान्तिकारी युद्ध हुआ। वह क्रान्तिकारी युद्ध अधूरा जरूर था, क्योंकि एक ओर उसने अपने यहाँ के मूल निवासियों का संहार किया तो दूसरी ओर दास प्रथा को एक सदी तक कायम रखा, फिर भी वह स्वाधीनता आन्दोलनों के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी। उस समय संयुक्त राज्य अमेरिका को राक्षस नही कहा जा सकता था। मुझे यह मानने में भी कठिनाई है कि वह भविष्य में भी राक्षस ही बना रहेगा। मैं अमेरिका की जनता का भला चाहता हूँ, इसलिए यह मानता हूँ कि भविष्य में वहाँ की जनता अपने देश के राक्षसी व्यवहार से मुक्त होगी। ऐसा करके अमेरिकी जनता अपना भला करेगी और बाकी दुनिया का भी। मुझे उम्मीद है कि अन्य

महाशक्तियों की जनता भी अपने-अपने देशों के राक्षसी रंग-ढंग से किसी न किसी दिन मुक्त ज़रूर होगी।

ऐसा जब होगा, तब संयुक्त राज्य अमेरिका का अन्य देशों के साथ-साथ क्यूबा से भी मित्रतापूर्ण संबंध बनेगा। मुझे ऐसा लगता है कि मार्ती ने अमेरिका के जिस राक्षसी चरित्र की चर्चा की है वह उसके अस्तित्व और स्वभाव से नहीं जुड़ा है बल्कि एक ऐतिहासिक स्थिति है। अमेरिका न तो राक्षस पैदा हुआ था और न हमेशा राक्षस रहेगा। लेकिन मैं समझता हूँ कि अमेरिका में बुनियादी सामाजिक परिवर्तन आने के पहले भी क्यूबा से राजनयिक और दूसरे तरह के संबंध बन सकते हैं। इसके लिए दोनो देशो को कुछ-न-कुछ बदलना होगा। जिस तरह हम क्यूबा के लोग अमेरिका से सबंध बनाने के लिए यह शर्त नहीं रखते कि वह पूंजीवादी व्यवस्था को छोड दे उसी तरह अमेरिका को भी यह मांग नहीं करनी चाहिए कि हम अपनी समाजवादी व्यवस्था और प्रभुसत्ता छोड़ दें। अमेरिका की ऐसी मांग का मतलब होगा कि क्यूबा 1959 के पहले की तरह अमेरिकी प्रभुत्व के प्रभाव में रहे और उसका उपनिवेश बन जाए। ऐसी मांग राक्षसी मांग होगी। अब तक अमेरिका की ओर से ऐसा कोई संकेत नही मिला है कि वह क्यूबा से सहज सम्बन्ध बनाना चाहता है। अपने पूर्ववर्तियों की तरह क्लिंटन प्रशासन भी हमारी मौत का इन्तजार कर रहा है। लेकिन एक ऐसे समय में, जबकि दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद का अंत हुआ है और इजरायल तथा पी.एल.ओ. के बीच समझौता संभव हुआ है, तब क्या यह संभव नहीं है कि देर-सबेर अमेरिका और क्यूबा बातचीत के माध्यम से अपने मतभेद दूर करेंगे?

ऐसा होने से पहले हमारे लिए यह जरूरी है कि हम आत्मसम्मान के साथ जीवित रहें। सह-अस्तित्व की पहली शर्त है- अस्तित्व। इस प्रसंग में मैं इस बात का उल्लेख करना चाहता हूँ कि अमेरिकी नाकेबन्दी और आर्थिक प्रतिबन्ध की संयुक्त राष्ट्र के साथ-साथ अन्य अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भी कई बार निन्दा की गई है। अभी कुछ दिन पहले ब्राजील में दक्षिण अमेरिका के राज्याध्यक्षों की जो बैठक हुई थी, उसमें भी अमेरिकी नाकेबन्दी और प्रतिबन्ध की निन्दा की गई। इन सबके साथ ही दुनिया के कई देश क्यूबा से राजनयिक और व्यापार संबंधी सम्बन्ध बनाने के लिए आगे आ रहे हैं।

डायना और बेवरली : आपने कहा है कि सोवियत संघ के साथ क्यूबा के सम्बन्ध के कारण उसे आगे बढ़ने में सुविधा हुई और अमेरिका ने क्यूबा को अस्थिर करने तथा क्रान्ति को नष्ट करने की जो कोशिश की थी उससे अपनी रक्षा करने में मदद भी मिली। लेकिन क्या सोवियत

संघ से क्यूबा के सम्बन्ध का यह परिणाम नहीं हुआ कि उस सम्बन्ध के कारण क्यूबा के स्वतंत्र और आत्मनिर्भर समाजवादी विकास में बाधा पड़ी ? यदि हम पिछले तीस वर्षों के इतिहास के महत्वपूर्ण मोड़ों की ओर देखें तो क्या यह नहीं लगता कि अगर फिदेल कास्त्रो ने यह घोषणा न की होती कि क्यूबा की क्रान्ति समाजवादी क्रान्ति है तो बाद के दिनों की घटनाएँ और स्थितियाँ अलग तरह की होतीं, निर्णय और आदर्श भी अलग ढंग के होते और प्राथमिकताएँ भी भिन्न होतीं ?

रेतामार : मुझे ऐसा नहीं लगता कि फिदेल ने कभी भी यह खुलेआम घोषणा की थी कि क्यूबा सोवियत समूह का हिस्सा होगा। 1961 में जब अमेरिका ने क्यूबा पर आक्रमण किया और बमबारी शुरू की तब कास्त्रो ने कहा था कि क्यूबा की क्रान्ति समाजवादी है। उसी साल के अंत में फिदेल ने क्यूबा की क्रान्ति को मार्क्सवाद-लेनिनवाद से जुड़े होने की बात की थी। आजकल मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बारे में जो अनेक प्रकार के दुराग्रह फैले हुए हैं उनका एक कारण मार्क्सवाद सम्बन्धी अनेक भ्रम हैं और दूसरा कारण मार्क्सवाद-लेनिनवाद को सोवियत संघ से जोड़कर देखना है। लेकिन मुझे यह याद नहीं है कि फिदेल ने कभी भी क्यूबा को सोवियत समूह में शामिल करने की घोषणा की हो। सच बात तो यह है कि क्यूबा कभी भी वारसा सन्धि में शामिल नहीं हुआ। वह गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में शामिल रहा है और एक बार उसका अध्यक्ष भी। वह अमेरिकी नाकेबन्दी के कारण सत्तर के दशक में सैनिक दृष्टि से सोवियत संघ के करीब हुआ था। वह समय हमारे इतिहास का सबसे बंजर समय है। क्यूबा अपनी इच्छा से नहीं बल्कि शीतयुद्ध के दबाव के कारण सोवियत संघ पर निर्भर हुआ। यह हमारी क्रान्ति का उद्देश्य नहीं था। यह बात हर व्यक्ति जानता है कि मिसाइल संकट के समय ख्रुश्चेव के व्यवहार के कारण सोवियत संघ से क्यूबा के सम्बन्ध में तनाव पैदा हो गया था। वह तनाव तो बहुत दिनों तक नहीं रहा, लेकिन उसके बाद अत्यन्त कठिन स्थितियों का सामना करते हुए भी क्यूबा ने अपनी स्वतंत्रता बनाए रखने की कोशिश की।

जहाँ तक भिन्न स्थितियों की संभावना की बात है तो उस प्रसंग में मुझे चेस्टेर्टन का एक कथन याद आ रहा है। उसने कहा था कि किसी घटना के घटने से यह साबित नहीं होता कि उसे घटित होना ही था। निश्चय ही हमारी क्रान्ति का स्वरूप जो है उससे भिन्न हो सकता था। यहाँ हम ख़ोस लेज़ामा लिमा के शब्दों में 'संभव बिम्बों' के क्षेत्र में प्रवेश कर रहे हैं। परन्तु अब इस बात पर पछताने का कोई अर्थ नहीं है कि जो कुछ हुआ वह क्यों हुआ। मैं आपको यह याद दिलाना चाहता हूँ कि 1959 में जब हमारा

सोवियत संघ से राजनयिक सम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ था तब फिदेल ने पहले रूस की नहीं बल्कि अमेरिका की यात्रा की। उस यात्रा के दौरान आइजेन हावर ने ठीक से व्यवहार नहीं किया और रिचर्ड निक्सन से भी फिदेल की मुलाकात सुखद नहीं रही। अब हमें यह भी मालूम है कि 1959 में अमेरिका की सरकार ने क्यूबा की क्रान्ति को दबाने की पूरी योजना बनाई थी। अगर उस समय आइजेन हावर ने फिदेल के साथ अच्छा व्यवहार किया होता और अमेरिका तथा क्यूबा के बीच सम्मानजनक समझदारी का सम्बन्ध विकसित हुआ होता तो बाद में जो स्थितियाँ आईं वे नहीं आतीं। हम दक्षिण अमेरिका के लोग यह जानते हैं कि आइजेन हावर ने सी.आई.ए. के माध्यम से किस तरह गुआटेमाला में याकाबो आर्बेन्ज की सरकार का तख्ता पलटा था, क्योंकि उस देश मे जो अमेरिकी पूंजी लगी हुई थी वह खतरे में थी। वास्तव में 1848 में मेक्सिको के आधे भाग को हड़पने से लेकर 1965 में डोमिनिकन रिपब्लिक और 1989 में पनामा पर आक्रमण की अमेरिकी कार्रवाइयों को हम भूल नहीं सकते। कहना न होगा कि ये सारी घटनाएँ वहाँ घटीं जहाँ कोई साम्यवादी खतरा न था। जब क्यूबा की क्रान्ति के समाजवादी होने की घोषणा नहीं हुई थी तब 1959 में ही उसकी मौत का फतवा जारी किया जा चुका था। यह सब देखते हुए ऐसा सोचना निरर्थक है कि हमने यदि अपने समाज के निर्माण का अलग ढंग अपनाया होता तो अमेरिका से हमारे सम्बन्ध की स्थिति भिन्न होती। गुआटेमाला से क्यूबा का अन्तर यह है कि गुआटेमाला की सरकार उलट दी गई, परन्तु क्यूबा में वैसा नहीं हुआ। मुझे लगता है कि अमेरिकी सरकार की नज़र में क्यूबा का अक्षम्य अपराध यह है कि उसने 1959 में भूमि सुधार का कार्यक्रम लागू किया और अपने विकास की स्वतंत्र राजनीतिक-आर्थिक योजना बनाई। इन बातों का उद्देश्य अमेरिका या अन्य किसी देश की जनता को नाराज करना न था। **क्यूबा में ही नहीं दक्षिण अमेरिका के अनेक अन्य देशों में और वियतनाम मे भी अगर अमेरिका ने गुण्डागर्दी नहीं की होती तो हर चीज कितनी भिन्न होती। संभव है, मेरा यह कथन कुछ लोगों को कटु लगे, लेकिन ऐसा ही नॉम चोम्स्की भी कहते हे, जिनका मैं प्रशंसक हूँ।**

वास्तव में क्यूबा और अमेरिका के बीच अन्तर को समझने के लिए आपको 1961 से पीछे जाना होगा, जब फिदेल ने क्यूबा की क्रान्ति को समाजवादी होने की घोषणा की थी। यही नहीं आपको 1959 में क्यूबा की क्रान्ति की सफलता के पहले की स्थितियों को भी देखना होगा। उस स्थिति को और अधिक ठीक से जानने के लिए 19वीं सदी के उस इतिहास को भी देखना होगा जिसमें अमेरिका का विस्तारवादी शासकवर्ग क्यूबा को हड़पकर अपने अधिकार में करना चाहता था। अमेरिकी

शासकवर्ग की वह आकांक्षा कभी मरी नहीं तो पूरी भी नहीं हुई। एक राष्ट्र के रूप मे क्यूबा के जन्म से ही उस पर अमेरिका की आँख लगी रही है। 1960 में ही अमेरिका ने क्यूबा से चीनी के आयात पर प्रतिबन्ध लगा दिया। उस वर्ष क्यूबा में चीनी का जितना उत्पादन हुआ उसे सोवियत संघ ने खरीदा और बदले में तेल दिया, जिसे क्यूबा स्थित अमेरिकी तेल-शोधक कारखानों ने साफ करने से मना कर दिया। उन कारखानो ने क्यूबा की अदालतों के निर्णयों को भी नहीं माना। उसके बाद क्यूबा में राष्ट्रीयकरण की प्रक्रिया तेज हुई। तब सोवियत संघ से क्यूबा का सम्बन्ध बढ़ने लगा और अमेरिका से बिगड़ने लगा। **कोई पूरी तरह सशयवादी ही कहेगा कि आरम्भ से ही क्यूबा की क्रान्ति का लक्ष्य शीतयुद्ध में सोवियत संघ की कठपुतली बनना था। ऐसा सशयवाद उस उत्तर-आधुनिकतावाद की उपज है जो यह मानता है कि अतीत का कोई अस्तित्व नहीं होता है, और यह भी कि वह वर्तमान ही सब कुछ है, जिसमें पराजय और इतिहास के काल्पनिक अंत की बातें सच हैं। यह ठीक है कि बीता हुआ वर्तमान ही अतीत है, परन्तु व्यतीत को जाने बिना हम वर्तमान की कठिनाइयों को कैसे समझ सकते हैं।**

व्यक्तिगत रूप से मैं आरम्भ से ही यह मानता रहा हूँ कि क्यूबाई क्रान्ति को समाजवादी ही होना है। मैं किशोरावस्था से ही समाजवादी रहा हूँ। उस समय बर्नार्ड शॉ के विचारों से प्रभावित होकर समाजवाद की ओर आकर्षित हुआ था। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि समाजवाद ही मानव समाज का भविष्य है अन्यथा उसका कोई भविष्य नहीं है। अगर क्यूबा की क्रान्ति को अमेरिका के कारण अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ा होता तो क्यूबा में समाजवाद का विकास अधिक सुगम, सहज और मौलिक होता। गलतियाँ हमसे भी हुई हैं, लेकिन हमारे पास कोई और विकल्प न था। शुरू से ही हमारी क्रान्ति को बदनाम और बर्बाद करने की हरसभव कोशिशें होती रही हैं। अब भी वह इरादा बदला नहीं है। अगर ऐसी कोशिशें नही होतीं तो हमारा इतिहास भिन्न और बेहतर होता। लेकिन हम अपनी क्रान्ति की उपलब्धियों पर गर्व करते हैं। मार्क्स ने कहा था कि हम अपना इतिहास खुद बनाते हैं परन्तु उस इतिहास की परिस्थितियां अतीत की देन होती हैं; हमारी बनाई हुई नहीं। हम आज जिस कठिन स्थिति में जी रहे हैं उसके लिए उत्तरदायी वे हैं जिन्होंने 1959 से ही हमारा जीना हराम कर रखा है।

डायना और बेवरली : आइए, अब हम आपके लेखन के बारे में कुछ बातें करें। फ़ैनन के साथ आपको उत्तर औपनिवेशिक विमर्श का प्रवर्तक माना जाता है। क्या आप उत्तर औपनिवेशिक विमर्श के बारे

में अपनी राय बतायेंगे और उस विमर्श से जुड़े एडवर्ड सईद और गायित्री चक्रवर्ती स्पीवाक से अपने सम्बन्धो की बात करना पसन्द करेंगे ?

रेतामार : फ़ैनन के साथ मुझे रखकर आपने मेरा सम्मान बढ़ाया है। चेगुवेरा भी फ़ैनन का प्रशंसक था। मैंने दक्षिण अमेरिका के लिए फ़ैनन के विचारों की उपयोगिता के बारे में 60 के दशक में दूसरों से पहले लिखा था। यद्यपि 'उत्तर औपनिवेशक' शब्द आजकल खूब फैशन में है और मार्तिनेज एस्त्रादा जैसे विचारक भी उसका प्रयोग करते रहे हैं, फिर भी मैं यह जरूर कहूँगा कि मैं इस शब्द और इसमें निहित धारणा से सतुष्ट नही हूँ। जो दुनिया पहले उपनिवेश हुआ करती थी वह अब भी पूरी तरह उपनिवेशवाद के प्रभाव से मुक्त नहीं है, बल्कि नव उपनिवेशवाद का शिकार है। यह केवल शब्दों का खेल नहीं है। उत्तर औपनिवेशिक कहने से यह अर्थ निकलता है कि हम उपनिवेशवाद को बहुत पीछे छोड़ आए हैं। लेकिन यह सच नहीं है। नव उपनिवेशवाद अनेक रूपों में आज भी उपनिवेशवादी स्थितियाँ कायम किए हुए है। **नव उपनिवेशवाद आज के साम्राज्यवाद का नया नाम है। लेकिन जो लोग यह मानते हैं कि अब साम्राज्यवाद कही नहीं है वे ही उत्तर औपनिवेशिकता की बात करते हैं।** अभी कुछ दिन पहले मैंने एक समझदार समझे जाने वाले लेखक का लेख पढ़ा था जिसमें कहा गया था कि सोवियत साम्राज्य के नाश के बाद अब कहीं कोई साम्राज्य नहीं है, इसलिए कही कोई उपनिवेश भी नहीं है। लेकिन 'सोवियत साम्राज्य' केवल एक रूपक है वैसा ही जैसे 1894 में मार्ती ने अमेरिका को अमेरिकी रोम कहा था। **यह ठीक है कि अच्छे रूपक समझ बढ़ाने वाले होते हैं, लेकिन इतिहास से जुड़े रूपक यदि बहुत चमकदार हुए तो वे विशिष्ट परिस्थितियों के बोध को धुंधला भी बनाते हैं।** वही स्थिति सोवियत साम्राज्य का रूपक बाँधने वाले लेखक ने पैदा की है। **लेकिन साम्राज्यवाद कोई रूपक नही, एक वास्तविकता है, जब तक साम्राज्यवाद रहेगा तब साम्राज्य भी होंगे और उपनिवेश भी; उन्हें चाहे आप नया कहें या पुराना।** असल में उत्तर औपनिवेशिकता तो उपनिवेश की अवस्था के बाद की स्थिति है। उदाहरण के लिए अमेरिका को उत्तर औपनिवेशिक कहा जा सकता है और क्यूबा को भी। लेकिन अनेक विकासशील देश नये किस्म के उपनिवेश हैं, जहाँ नाम मात्र की स्वाधीनता है।

मैं फैनन और दूसरों के प्रति पूरे सम्मान के बावजूद यह कहना चाहता हूँ कि उपनिवेशवाद विरोधी विचारों का सच्चा अग्रदूत मार्ती है, जिसे दक्षिण अमेरिका में अब भी बहुत लोग ठीक से नहीं जानते। वह न्यूयार्क शहर में रहता था, उपनिवेशवाद को ठीक से समझता था और दुनिया के गरीबों के प्रति सच्ची सहानुभूति रखता था। मार्ती

ने आधुनिकता को नए ढंग से पढ़ने और समझने की कोशिश की। वह उपनिवेशवाद के शिकार लोगों की दृष्टि से आधुनिकता को देखने की कोशिश कर रहा था। पूंजीवाद की राजधानियों में मार्ती की उपेक्षा से महानगरों की सतही मानसिकता का पता चलता है। फैनन को यूरोप में जरूर पढ़ा और सराहा गया है, लेकिन उसका कारण यह है कि वह 'फ्रेंच' में लिखता था और पेरिस में छपा था। आप ही कहिए कि अब केनिया का उपन्यासकार न्गुगी वा थ्योंगो जब अंग्रेजी छोड़कर अपने देश की जनभाषा में लिखने लगा है तब उसे यूरोप में कौन पढ़ेगा? **लेकिन स्पानी में लिखने के बावजूद मार्ती की स्पानीभाषी देशों में जो उपेक्षा हुई है उससे साबित होता है कि हमारे चिंतन पर उपनिवेशवाद का कितना गहरा प्रभाव है।** क्या इस स्थिति को उत्तर-औपनिवेशिक कहा जा सकता है या उन लोगों का उपनिवेशवाद जो 'उत्तर' का जाप करते नहीं थकते।

यद्यपि सईद और स्पीवाक को उत्तर-औपनिवेशिक लेखक कहा जाता है, फिर भी मैं उनसे आत्मीयता अनुभव करता हूँ। अभी कुछ साल पहले तक न तो मैं सईद के लेखक से परिचित था और न सईद मेरे लेखन से। कुछ मित्रों ने हमें दोनों को मिलाया और हमारे कामों की एकता की ओर संकेत भी किया। उसके बाद से मैं सईद के लेखन को पढ़ता रहा हूँ, खासतौर से 'शुरुआतें' (बिगिनिंग्स) और 'दुनिया, पाठ और आलोचक (द वर्ल्ड, द टेक्स्ट एण्ड द क्रिटिक)। मैं उनकी हाल में छपी पुस्तक 'संस्कृति और साम्राज्यवाद' (कल्चर एण्ड इम्पिरियलिज्म)' का इन्तजार कर रहा हूँ। मैं स्पीवाक की रचनाओं के बारे में और भी कम जानता हूँ। मैं उनकी रचना 'दूसरी दुनियाओ में' (इन द अदर वर्ल्ड्स) को पढ़ चुका हूँ और 'क्या अधीन भी बोल सकते हैं' (कैन द सबाल्टर्न स्पीक) को समकालीन आलोचना की अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति मानता हूँ। हेनरी लुई गेट्स द्वारा सम्पादित 'क्रिटिकल इनक्वेरी' के 1985 के विशेषांक में गायित्री ने मेरे 'कालिबन' नामक लेख पर बहस शुरू की थी जिसका जवाब मैंने कुछ साल पहले एक पत्रिका में दिया था। इस बीच एक बहुत अच्छी बात यह हुई कि पिछले वर्ष मेरी अमेरिका की यात्रा के समय गायित्री ने मुझे और अडेलैडा दी खुआन को अपने घर रात्रिभोज के लिए आमंत्रित किया था। उस भोज के समय सईद, उनकी पत्नी और जीन फ्रैंको भी मौजूद थे। वह शाम बहुत सुखद थी। वहाँ देरीदा का अंग्रेजी में अनुवाद करने वाली एक भारतीय, एक फिलिस्तीन में जन्मा अमेरिकी और एक दक्षिण अमेरिका मे रची बसी अंग्रेज स्त्री, सभी एक जगह मौजूद थे। उनके साथ मेरे जैसा एक क्यूबाई व्यक्ति भी था जिसने कोलम्बिया में प्रोफेसर होने के बदले अपनी आत्मा की पुकार पर क्यूबा में रहना पसन्द किया। यद्यपि कई बातों के बारे में मेरी जानकारी उतनी नही है जितनी उन लोगों की, जैसे कि नारीवाद के बारे में गायित्री की और फिलिस्तीन की

त्रासदी के बारे में सईद की। फिर भी मैंने उनसे बाहरी आत्मीयता अनुभव की। उस समय मुझे यह भी महसूस हुआ कि न्यूयार्क में दुनिया की विविधता किस तरह मौजूद है और मेरे भीतर न्यूयार्क की।

> **डायना और बेवरली** : आपने 1971 के अपने 'कालिबन' नामक निबन्ध पर कई बार पुनर्विचार किया है और उसको नये सरोकारों तथा सवालों से जोड़ा है। अभी कुछ समय पहले आपने जो निबन्ध लिखा था उसका शीर्षक था 'कालिबन से विदाई' (फेयरवेल टु कालिबन)। क्या यह शीर्षक आपके चिंतन में किसी नये मोड़ का सूचक है ?

रेतामार : वास्तव मे 'कालिबन से विदाई' (फेयरवेल टु काबिलन) मेरे निबन्धो के एक जापानी संस्करण के परिशिष्ट क के रूप में लिखा गया था जिसमें मेरे मूल लेख के बारे मे उठे सवालों का जवाब देने की कोशिश थी। उसमें कुछ आवश्यक सुझावो और संशोधनों का प्रयास भी था। लेकिन आपका सवाल बहुत अच्छा है क्योंकि वह मुझे एक गलतफहमी दूर करने का मौका देता है। **'कालिबन से विदाई' नामक लेख लिखने का आशय यह था कि अब मैं एक नए वैचारिक रूपके का विकास करना चाहता हूँ। लेकिन उस लेख का यह आशय एकदम नहीं था कि मैं मूल लेख में मौजूद सरोकारों को छोड़ रहा हूँ, बल्कि मुझे तो ऐसा लगता है कि मूल लेख में जो सवाल और सरोकार हैं वे भविष्य में भी प्रासंगिक बने रहेंगे।** आप एक ऐसे अभिनेता की कल्पना कीजिए जिसने **टेम्पेस्ट** के किसी चरित्र का अभिनय इतना अच्छा किया हो कि वह उसका साकार रूप लगे और बाद में लोग उस अभिनेता को हैमलेट मैकबेथ, ओथेलो, या किंग लियर के किसी पात्र का इसलिए अभिनय न करने दे कि लोगो के मन में उसकी बनी बनाई छवि टूट न जाय। लेकिन वह अभिनेता ऐसी स्थिति से सतुष्ट कैसे रह सकता है। वह दूसरे नाटकों में जरूर काम करना चाहेगा और आगे बढना भी। उस निबंध के प्रसंग में मेरी स्थिति बहुत कुछ उस अभिनेता जैसी बन गई लगती है। मैंने 1971 के अपने निबन्ध में तीसरी दुनिया के देशों की संस्कृतियों की औपनिवेशिक अवस्था के बारे में कुछ लिखा था, वह आज भी प्रासंगिक है। उस समय दुनिया में मुख्य अन्तर्विरोध पूंजीवाद और समाजवाद के बीच था जिसे पश्चिम और पूरब का संघर्ष भी कहा जाता था। तीसरी दुनिया के देश उस अन्तर्विरोध से जूझ रहे थे और वे अपने सघर्ष मे समाजवादी देशों से मदद की उम्मीद भी कर रहे थे। अब दूसरी दुनिया के विघटन के बाद तीसरी दुनिया के देशों की दशा बहुत खराब हो गई है। मैंने अपने मूल निबन्ध में राष्ट्रीय स्वाधीनता तथा उपनिवेशवाद से मुक्ति के लिए सघर्ष की प्रक्रिया में बुद्धिजीवियों की भूमिका की विस्तार से चर्चा की थी। मुझे लगता

है कि वे सभी बातें अभी प्रासंगिक बनी हुई है। मैंने विदाई वाले लेख में एक विषय से विदाई की बात की थी न कि सरोकारों से विदाई की। **आज के समय में मुख्य अन्तर्विरोध उत्तर और दक्षिण के बीच है,** जिसके संकेत मेरे मूल लेख में मौजूद हैं। यह ठीक है कि अब कुछ नये सवाल पहले से अधिक उग्र रूप में सामने आ रहे है।

> **डायना और बेवरली :** आइए, अब हम कुछ नये विषयों के बारे में बात करें। आपने उत्तर आधुनिकता पर फ्रेडरिक जेम्सन का प्रसिद्ध निबंध अंग्रेजी में छपने के तत्काल बाद अपनी पत्रिका 'कासा दे लास् अमेरिकास्' में छापा था। उससे दक्षिण अमेरिका में उत्तर आधुनिकता पर बहस की शुरुआत हुई थी। आप यह जानते हैं कि दक्षिण अमेरिका में कुछ लोग उत्तर आधुनिकता को सांस्कृतिक साम्राज्यवाद का एक नया रूप मानते हैं तो कुछ दूसरे उसे विचारों के आयात का एक और उदाहरण कहते हैं। आप उत्तर आधुनिकता के बारे में क्या सोचते हैं?

रेतामार : इस प्रसंग में भी मेरे मार्गदर्शक मार्ती ही हैं। उनका एक प्रसिद्ध कथन मुझे याद आ रहा है, "अपने देश में विदेशी कलमें रोपना ठीक है, लेकिन जमीन अपनी होनी चाहिए।" मेरी पत्रिका में विचारों के अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ को ध्यान में रखा जाता है इसलिए उसमें क्षेत्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बहसें छपती हैं। हमने उत्तर आधुनिकतावाद और उससे जुड़ी समस्याओं को समझने की कोशिश की है। उन सब बातों को जेम्सन ने अपने लेख में बहुत अच्छी तरह प्रस्तुत किया है। उनका यह कहना सही है कि हम इतिहास के एक नये दौर में जी रहे हैं। **परन्तु यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि उस दौर को उत्तर आधुनिकता या उत्तर आधुनिकतावाद ही क्यों कहा जाए। मैं उत्तर आधुनिकता का जो अर्थ समझता हूँ उसका इस दौर की विशेषताओं से कोई मेल नही है। मैं यह भी कहना चाहूँगा कि उत्तर आधुनिकता का कोई सुनिश्चित अर्थ नहीं है। आधुनिकतावादी हाबरमास के लिए उत्तर आधुनिकता का जो अर्थ है वही फ्रेडरिक जेम्सन और ल्योतार के लिए नहीं है।** मैं उत्तर आधुनिकता से सम्बन्धित जेम्सन के विचारों से सहमत हूँ, लेकिन ल्योतार की मान्यताओ से बिल्कुल नहीं। उत्तर आधुनिकता का अर्थ इस बात पर निर्भर है कि उसके बारे में कौन कहाँ विचार कर रहा है। अभी कुछ दिन पहले मैं अर्जेन्तीना के दार्शनिक लेओन रोजीन्नेर की पुस्तक 'राजनीतिक चेतना और ऐतिहासिक आत्मपरकता' पढ़ रहा था। उन्होंने लिखा है कि "अर्जेन्तीना में हम लोगों के लिए उत्तर आधुनिकता का अर्थ है सैनिक तानाशाही की यातना से मुक्ति की अवस्था।" उन्होंने यह भी लिखा है, "वे (उत्तर आधुनिकतावादी) हमसे कहते हैं कि जब आप सभी उम्मीदें छोड़ दें तब आप उत्तर आधुनिक होंगे। वे विजेता की तरह सोचते

है। उनके लिए उत्तर आधुनिक का अर्थ है उत्तर मार्क्सवादी होना।"

हम लम्बे समय से तरह-तरह के उपसर्गों की छाया में जी रहे हैं। हमने पहले 'नव' या 'नयी' का सामना किया था। (जैसे नयी समीक्षा, नयी कहानी, नयी कविता) । फिर हम पर 'प्रति' या 'अ' का भूत सवार हुआ (जैसे प्रतिक्रान्ति, अकविता अकहानी आदि) । अब हम 'उत्तर' के जादू के शिकार हैं (उत्तर आधुनिकता, उत्तर यथार्थवाद, उत्तर मार्क्सवाद, उत्तर औपनिवेशिक आदि)। लेकिन 'उत्तर' का सम्बन्ध कालक्रम से भी है, इसलिए उत्तर आधुनिकता को समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि वह कब और कहाँ से आ रही है। दक्षिण अमेरिका में प्रायः विचारों का आयात होता रहा है। यह एक मजबूरी है। पश्चिम के नवीनतम सिद्धान्तों और विचारों को अपनाना और उन्हे तोते की तरह दोहराना एक बात है, लेकिन उनको अपने समाज की वास्तविकताओ के अनुकूल बनाना और विकसित करना दूसरी बात है। सारी दुनिया में उपनिवेशवाद के शिकार उत्तर आधुनिकता के बारे में इसलिए लिख और बोल रहे है क्योंकि यह पश्चिम के विचारों की दुनिया का सबसे नया फैशन है। ऐसी बहसें मुझे बहुत लाभदायक नही लगतीं। लेकिन इसके ठीक विपरीत मुझे यह भी उचित नहीं लगता कि उत्तर आधुनिकता की तरह जो भी विचार पश्चिम से आएँ उन्हें हर कीमत पर खारिज़ ही किया जाय। इसलिए मैंने मार्ती के कथन का हवाला दिया था। मार्ती के समय में पश्चिम में विचार और रचना की दुनिया में जो कुछ हो रहा था उससे वह परिचित था, लेकिन अपने अद्यतन ज्ञान के बावजूद वह दक्षिण अमेरिका और विशेष रूप से क्यूबा के लेखको से विचारों की वैसी ही मौलिकता की मांग करता था जैसी उसके विचारों में थी। वैसी मौलिकता अज्ञान से पैदा नहीं होती। **अज्ञान से पैदा हुई मौलिकता प्रायः कूपमंडूकता का प्रदर्शन करती है। लेकिन मौलिकता नकल से भी पैदा नहीं होती। वह अपने समाज की विशेष स्थितियों से जुड़ी हुई दृष्टि और व्यापक ज्ञान से उपजती है।** कहना न होगा कि दक्षिण अमेरिका में आधुनिक चिंतन की एक ऐसी धारा और परम्परा है जिसमें आधुनिकतावाद, उत्तर आधुनिकतावाद, विखण्डन, सांस्कृतिक अध्ययन और ऐसी अन्य विचारधाराओं के बीज मौजूद हैं। मुझे इस प्रसग में चिली के फ्रांसिस्को बिल्बाओ, पुएर्तोरिको के एउस्वेनियों मारिया दे ओखोस, डोमिनिको के पेद्रो एनरीकेज उरेन्या, क्यूबाई फेर्नान्दो ओर्तीज, मैक्सीको के आलफोन्सो रेईयेस्, अर्जेन्तिनाई एसेकियेल मार्तिनेज एस्त्रादा, पेरू के ख्रोसे कार्लोस, मारियातेगुई और उरुगुये के आलेख रामा आदि के नाम याद आ रहे हैं। लेकिन हमारी सांस्कृतिक स्थिति ऐसी है कि ये नाम पश्चिम में कोई नहीं जानता और हम दक्षिण अमेरिका में यह मानने को मजबूर हैं कि सिद्धान्त तो केवल वहीं से हमारे यहाँ आ सकता है।

डायना और बेवरली : आपकी पत्रिका के जनवरी-मार्च 1993 के अंक में अल्थूसेर के 1967 में आपको लिखे दो पत्र छपे थे जिनमें दक्षिण अमेरिका में सशस्त्र संघर्ष की चर्चा थी। क्या आप अल्थूसेर से अपने सम्बन्धों के बारे में कुछ बताएंगे? आपकी दृष्टि में समकालीन मार्क्सवाद के लिए अल्थूसेर के विचारों का क्या महत्व है?

रेतामार : मैंने उन पत्रों के साथ जो टिप्पणी लिखी थी उसे पढ़ने पर आपको मालूम हो जाएगा कि उनसे मेरा अच्छा सम्बन्ध था, लेकिन बहुत गहरा नहीं। **मैं एक कवि हूँ कोई राजनीतिक या दार्शनिक नहीं।** अल्थूसेर से मैं कई बार मिला था, हम दोनों के बीच पत्र व्यवहार भी था। मैंने अपनी 'पत्रिका' में 1966 में उनका एक लेख 'सैद्धान्तिक व्यवहार और सैद्धान्तिक निर्माण' छापा था। उसके बाद उसी वर्ष 16 अप्रैल को उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा। उस पत्र की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं; "मुझे आपकी पत्रिका मिली और आपका पत्र भी। आप कल्पना नहीं कर सकते कि मैं आपकी पत्रिका में अपने लेख के प्रकाशन से और आपके पत्र में व्यक्त भावना से कितना प्रभावित, आन्दोलित और उत्तेजित अनुभव कर रहा हूँ। आपके व्यवहार से मुझे अपार और अनन्य सुख मिला है।" क्या अल्थूसेर के इस कथन से यह स्पष्ट नहीं है कि वे अत्यन्त उदार व्यक्ति थे?

मैंने अल्थूसेर की रचनाओं को पहली बार 1964 में पढ़ा था। वे एक गंभीर मार्क्सवादी विचारक थे, उन्होंने मार्क्सवाद की नई व्याख्या की थी। मैं अल्थूसेर से भी पहले ग्राम्सी को पढ़ चुका था। अल्थूसेर ने स्वय यह लिखा है कि फ्रांस में अब तक कोई ग्राम्सी नहीं पैदा हुआ है। फ्रांसीसी चिंतन का दक्षिण अमेरिका पर बराबर प्रभाव पड़ता रहा है। वहाँ से कंगाल किस्म का मार्क्सवाद भी यहाँ आया है। **परन्तु ग्राम्सी की तरह अल्थूसेर के चिंतन से भी यह साबित होता है कि मार्क्सवाद विचारों की केवल एक जोड़ी पुरानी स्लीपर नहीं है, उसमें सैद्धान्तिक साहस और मौलिकता के लिए भी पर्याप्त संभावनाएं हैं।**

बाद के दिनो में अल्थूसेर पर यह आरोप लगाया गया था कि उन्होंने नए ढग का चलता मार्क्सवाद विकसित किया है। यह आरोप पूरी तरह निराधार नहीं है। ऐसा आरोप इंग्लैंड के ई.पी. थॉमसन और दक्षिण अमेरिका के अदोल्फो सांचेज वाजक्वेज तथा लेओन रोजीन्नेर ने उन पर लगाया है। स्वयं अल्थूसेर ने 'आत्मालोचन के तत्व' (एलीमेंट्स आफ सेल्फ क्रिटिसिज्म) में अपनी सैद्धान्तिक भूलों को स्वीकार किया है। आजकल अल्थूसेर की चर्चा काफी कम हो गई है। दक्षिण अमेरिका में कुछ समय तक

उनके विचारों का बहुत प्रभाव रहा है। भविष्य में हम उनके विचारों का अधिक सन्तुलित मूल्यांकन कर पायेंगे। पिछले वर्ष फ्रास में उनकी आत्मकथा छपी थी और उनकी जीवनी का पहला भाग भी प्रकाशित हुआ था। उसी अवसर पर हमारी पत्रिका में उनके पत्र छपे थे। आज मैं उनकी आत्मकथा के एक प्रसंग का विशेष रूप से उल्लेख करना चाहता हूँ, जिसमें उन्होंने फ्रांस में रहने वाले एक रूसी दार्शनिक कोजेव निकोव द्वारा हेगेल की दक्षिणपंथी व्याख्या की कड़ी आलोचना की है। कोजेव निकोव को फ्रांस मे केवल कोजेव भी कहा जाता है। वह एक नौकरशाह था। उसके विचारों का उन फ्रांसीसी बुद्धिजीवियों पर गहरा असर है जो यह कहते हैं कि इतिहास का अंत हो गया है। अल्थूसेर ने उसके विचारों में मौजूद नौकरशाही प्रवृत्तियो की जो आलोचना की है वह कोजेव के पक्के शिष्य और कट्टर अनुयायी फुकुयामा के विचारों पर भी पूरी तरह लागू होती है।

डायना और बेवरली : आप जानते ही हैं कि आज का समय वामपंथ के लिए अच्छा समय नहीं है। आप आज के समय की मांग के मुताबिक वामपंथी राजनीति में सुधार की बात करते रहे हैं। हमें ऐसा लगता है कि आप पेरू के 'साइनिंग पाथ' जैसे आन्दोलन की आलोचना करते रहे हैं। क्या आपको वामपंथी राजनीति के लिए कुछ आशा के संकेत दिखाई पड़ रहे हैं? खासतौर से निकारागुआ के 'सन्दिनिस्ता' आन्दोलन के अनुभवों के बारे में आपकी क्या राय है?

रेतामार : अभी कुछ दिन पहले ब्राजील के साओ पाउलो फोरम का एक सम्मेलन हवाना में हुआ था। यह मंच सैकड़ों पार्टियों और आन्दोलनों का संयुक्त मोर्चा है जिसमे बहुत विविधता और व्यापकता है। यह आज के दक्षिण अमेरिकी वामपंथ का प्रतिनिधि मच है। यह एक राजनीतिक संगठन है। जैसा कि **मैं पहले कह चुका हूँ कि मैं कोई राजनीतिज्ञ नहीं हूँ, फिर भी मैं राजनीति से अपरिचित भी नहीं हूँ, इसलिए जब मै वामपंथ के बारे में बात करता हूँ तो मुख्य रूप से वामपंथी बुद्धिजीवियों के बारे मे सोचता हूँ। बुद्धिजीवी समुदाय के बारे में मेरी धारणा ग्राम्सी से प्रभावित हैं, इसलिए वह बहुत व्यापक है।** उसमें राजनीतिज्ञ भी शामिल हैं, लेकिन उनको कोई विशेष महत्व मै नहीं देता। मैं यह मानता हूँ कि वामपंथी बुद्धिजीवी साओ पाउलो फोरम से पूरी तरह अलग नहीं रह सकते और ऐसे मंचों से जुड़ने के बाद उनकी दृष्टि और भूमिका में परिवर्तन आता है। लेकिन ऐसे मचों से जुड़े या उनके करीब रहने वाले वामपथी बुद्धिजीवी नये विचारों के विकास में लगे हैं। आप जानते ही हैं कि आजकल वामपंथियों को जिस दुनिया में काम करना है उसमें दक्षिणपंथियों का वर्चस्व है। मैं कई बार यह

कह चुका हूँ कि **नये दक्षिणपंथ की बात करना गलता है क्योंकि नये और पुराने दक्षिणपंथ में कोई फर्क नहीं है।** यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि दक्षिणपंथ का सबसे उग्र और पुराना रूप फासीवाद है। वैसे मै झूठी आशाओं के पीछे नहीं दौड़ता, फिर भी मैं यह कहना चाहता हूँ कि आजकल दक्षिण अमेरिका में और अन्यत्र भी कई जगह ऐसा सच्चा और नया वामपंथ विकसित हो रहा है जो विचार एवं व्यवहार में अतीत से बहुत कुछ सीखते हुए और वर्तमान को समझते हुए भविष्य की तैयारी में लगा है। इसका उदाहरण देने पर यह उत्तर बहुत लम्बा हो जाएगा। (इस साक्षात्कार के पूरा होने के कुछ सप्ताह बाद ही मैक्सिको में जापातिस्ता राष्ट्रीय मुक्ति सेना के नेतृत्व मे एक विशाल विद्रोह हुआ)।

आपने सन्दिनिस्ता आन्दोलन के अनुभव के बारे में मेरी राय पूछी है तो मेरे लिए उस आन्दोलन के अनुभवों का बहुत महत्व है। क्यूबा में हम लोग यह दावा करते हैं कि हमने सुअरों की खाड़ी (बे आफ पिग्स) के संकट के समय अमेरिकी साम्राज्यवाद को पराजित किया था, लेकिन सन्दिनिस्ता वालों ने 1920 और तीस के दशक मे ही अमेरिकी सेनाओं को निकारागुआ से खदेड़ा था। जिस तरह फिदेल कास्त्रो ने क्यूबा मे क्रान्ति को सफल बनाकर मार्ती के सपनों को पूरा किया उसी तरह साठ के दशक मे कार्लोस फोन्सेका अमादोर ने सन्दिनिस्ता मुक्ति मंच के निर्माण का काम किया था। इस तरह दोनों क्रान्तियों के बीच एक गहरा रिश्ता बनता है, लेकिन इससे दोनों की विशेषताएं समाप्त नहीं हो जातीं। वास्तव में मार्ती और सेन्दिनों के व्यक्तित्वो में पर्याप्त अन्तर था, उन्होंने भिन्न परिस्थितियों में लेकिन एक ही ढंग से काम किया। सन्दिनिस्ता क्रातिकारियों ने कभी अपनी क्रान्ति को समाजवादी नहीं कहा, फिर भी वे अमेरिका के अघोषित युद्ध और आक्रमण के उसी तरह शिकार हुए जैसे हम। निकारागुआ को वैसा अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन प्राप्त नहीं था जैसा हमें मिला, लेकिन उसे दक्षिण अमेरिका के अनेक देशों का समर्थन प्राप्त था। फिर भी इस समर्थन और क्रान्ति को समाजवादी बनाने की अनिच्छा के बावजूद अमेरिकी प्रशासन ने 1980 के दशक में निकारागुआ के विरुद्ध आर्थिक, राजनयिक, सैनिक और प्रचार सम्बन्धी जो अभियान चलाया उसके परिणामस्वरूप 1990 के चुनाव में सन्दिनिस्तावादी सत्ता से बाहर हो गए। उस चुनाव में निकारागुआ की जनता ने सन्दिनिस्तावादियों के खिलाफ वोट नहीं दिया, बल्कि अमेरिका समर्थित कन्ट्रा के आक्रमण और अमेरिका के आर्थिक दबावों से पैदा हुई तबाही से बचने के लिए मतदान किया था। उस समय अमेरिका की घोषित नीति थी कि सन्दिनिस्ता शासन के अंत के बाद ही कोई आर्थिक मदद मिल सकती है। आजकल निकारागुआ में जो कुछ हम देख रहे हैं उससे एक बार और यह साबित होता है कि

साम्राज्यवाद पर विश्वास करना गलत है। आजकल वहाँ हालात पहले से अधिक खराब है। चामोर्रो सरकार के सत्ता मे आने के बाद अमेरिकी सरकार ने आर्थिक मदद के जो वादे किए थे वे अब कहाँ गये ?

यह बात समझना मुश्किल नहीं है कि क्यूबा की क्रान्ति अमेरिकी साम्राज्यवाद को क्यों स्वीकार नहीं है। लेकिन उसे तो लोकतान्त्रिक ढग से समाजवाद लाने की कोशिश में लगी चिली की अलेन्दे सरकार भी स्वीकार न थी और अनेक पार्टियों मे जुडी चुनाव-प्रक्रिया को मानने वाली निकारागुआ की सन्दिनिस्ता सरकार भी बर्दास्त नही हुई। निकारागुआ में सन्दिनिस्ता आन्दोलन एक राजनीतिक शक्ति के रूप में आज भी समाप्त नहीं हुआ। वहाँ 80 के दशक में जो कुछ हुआ उससे स्पष्ट है कि दक्षिण अमेरिका में किसी भी देश की जनता यदि अमेरिकी शोषण और प्रभुत्व से निकलने की कोशिश करेगी तो साम्राज्यवाद उसे दबाने और नष्ट करने के लिए हर तरह के हथकडे अपनाएगा।

डायना और बेवरली : आपने अपनी हाल की अमेरिकी यात्रा के बारे में बताया था। आप अपने जीवन के आरम्भ में लम्बे समय तक अमेरिका में रहे हैं। हम यह भी जानते हैं कि मार्ती की तरह आपके मन में भी अमेरिका की संस्कृति के प्रति लगाव है। क्या आप अमेरिका और न्यूयार्क से अपने इस विशेष प्रकार के 'प्रेम' के बारे में कुछ बतायेंगे ?

रेतामार : यह विषय मुझे अत्यन्त प्रिय है। **एक स्पेनी कवि अन्तोनियो मकादो ने ठीक ही कहा था कि कोई भी व्यक्ति अपने प्रेम का चुनाव नही करता।** मैं जब सत्रह वर्ष का था तभी न्यूयार्क मैं रहने चला गया। वहाँ मेरी मुलाकात स्तिएग्लीज और म्वेइबर्ग से हुई। उस समय मैं चित्रकार बनना चाहता था। दस वर्ष बाद, जब अमेरिका मे मैकार्थीवाद का प्रभाव घट रहा था तब मैं येल विश्वविद्यालय में साहित्य का प्रोफेसर पद स्वीकार करने के लिए पहुंचा। वहाँ मुझे मेरे मित्र खोस खुआन एरोम ने बुलाया था। मैं अपनी पत्नी के साथ रहता था और सप्ताह के अन्त में न्यूयार्क जाता था। अमेरिका से मेरे सम्बन्ध का इतिहास थोड़ा और पुराना है। जब मैं पैदा हुआ तब क्यूबा बत्तीस वर्षों से अमेरिकी साम्राज्य का हिस्सा था, इसलिए अमेरिका से मेरा सम्बन्ध मजबूरी में बना था। मेरे जन्म से दो वर्ष पहले प्रसिद्ध इतिहासकार लिलैण्ड हेमिल्टन जेक्स ने एक किताब लिखी थी जिसका नाम था 'हमारा क्यूबाई उपनिवेश' (आवर क्यूबन कालोनी)। क्या इस शीर्षक से सब कुछ सामने नहीं आ जाता? इस सदी के

आरम्भ में एक ऐसी किताब लिखी गई थी जिसका मेरी पीढ़ी के क्यूबाइयों पर बहुत असर पड़ा। किताब का नाम था 'अमेरिकी साम्राज्य' (द अमेरिकन इम्पायर), उसके लेखक थे स्काट नियरिंग। 1921 में कार्लोस बालीन्य ने इस पुस्तक का स्पेनी मे अनुवाद किया था। नियरिंग को लम्बी आयु मिली थी। वे जान रीड के जीवन पर बनी फिल्म रेडस् से सम्बन्धित मुकदमें में गवाह के रूप में पेश हुए थे। बालीन्थ मार्क्स का अनुयायी था और मार्ती का मित्र। वह मार्ती के साथ क्यूबा से निष्कासन के बाद अमेरिका में रह रहा था। वहीं दोनों ने 1892 में क्यूबाई क्रान्तिकारी पार्टी की स्थापना की थी। बाद के दिनों में 1925 मे उसने खुलिओ अंतोनिओ मेल्ला के साथ मिलकर क्यूबा की पहली कम्युनिस्ट पार्टी बनाई। मैने यह सब इसलिए कहा कि क्यूबा और अमेरिका के सम्बन्ध की कुछ ऐसी बातें सामने आ सकें जिन्हें कम लोग जानते हैं।

जब मैं सत्रह वर्ष का था तब मैंने हेमिग्वे का उनके घर पर हवाना में साक्षात्कार लिया था, वह साक्षात्कार बहुत अच्छा नहीं था, लेकिन उसी के साथ मैंने साहित्य मे प्रवेश किया। **क्यूबा में हेमिंग्वे को स्थानीय संस्कृति का गौरव माना जाता है। जिस तरह अपनी स्वाधीनता के लिए स्पेन से सघर्ष करने के बावजूद हम स्पेनी संस्कृति को अपना शत्रु नही समझते उसी तरह अमेरिका से मदभेद के बावजूद हम अमेरिका की संस्कृति के दुश्मन नही हैं। मुझे सेवतिज, गार्सिलासो, सांतातेरेसा अथवा क्वेवेदो को पढ़ने का उतना ही अधिकार है जितना माद्रिद में पैदा हुए किसी व्यक्ति को।** अमेरिका की सस्कृति से मेरा सम्बन्ध उतना गहरा नहीं है जितना स्पेन की संस्कृति से। मैं मुश्किल से अंग्रेजी लिख और बोल पाता हूँ। हमारा राष्ट्रीय खेल बेसबॉल है जो अमेरिका का भी लोकप्रिय खेल है। क्रान्ति के तीस वर्षों बाद भी हमारे यहां बच्चों की किताबें, फिल्मे और संगीत के अनेक रूप अमेरिका से आते हैं, इनमें कुछ अच्छे हैं और कुछ खराब। लेकिन क्यूबा की संस्कृति में इन सबकी उपस्थिति एक सच्चाई है। क्यूबा के हर बच्चे की तरह मैं भी बचपन में बेसबॉल का खिलाड़ी बनना चाहता था। उसमे असफल होने के बाद ही जीवन दूसरी ओर मुड़ा। मैं प्रायः यह कहता हूँ कि अगर क्यूबा दक्षिण अमेरिका में स्पेन की संस्कृति का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करने वाला देश है तो वह पुएर्तोरिको को छोड़कर अमेरिकी संस्कृति में सर्वाधिक रंगा हुआ देश भी है। मैं कभी पुएर्तोरिको गया नहीं हूँ लेकिन वह जिस त्रासदी का शिकार है उस कारण उसके प्रति मेरे मन मे अवसाद से भरा प्रेम भी है। जब मैं न्यूयार्क में था तब मैं पुएर्तोरिको का निवासी जैसा ही था।

न्यूयार्क से मेरा प्रेम 1947 से है जब क्लिंटन पैदा हुए होंगे। वहां मै क्यूबा, पुएर्तोरिको, डोमिनिको, चीन, इटली और अंगोला के लोगों के साथ-साथ यहूदियों और

काल अमेरिकियों के साथ रहता था। यद्यपि अमेरिका के दक्षिणी भाग मे मौजूद जातिभेद को देखकर मेरे मन में घृणा पैदा होती थी, लेकिन न्यूयार्क में संस्कृतियों की अनेकता मुझे आकर्षित करती थी। मैं आज भी अमेरिका में संस्कृतियों के विविधतावाद की विजय की उम्मीद करता हूँ। मैं जानता हूँ कि बहुत से लोग न्यूयार्क से घृणा करते है। मैं उस घृणा के कारणों को भी जानता हूँ। मुझे यह भी याद है कि न्यूयार्क के बारे मे और उसके विरुद्ध कविता की दो महान कृतियां स्पेनी भाषा में रची गई हैं उनमे से एक है मार्ती की 'मुक्त कविताएं' और दूसरी लोर्का की 'न्यूयार्क में कवि' मुझे याद है एक बार मैं न्यूयार्क में अपने कवि मित्र एउखेनिओ फ्लोरित के साथ टहल रहा था उस समय वे नब्बे वर्ष के थे। हम लोगों के बीच मार्ती और लोर्का के बारे में बातें हो रही थी। उन दोनों के बारे में हमारी राय समान नहीं थी। मेरी राय में 'न्यूयार्क में कवि' लोर्का की सर्वोत्तम रचना है मैं यह भी जानता हूँ कि अगर मार्ती पन्द्रह वर्षों तक न्यूयार्क मे नहीं रहे होते तो वे खुद को और अपने समय को ठीक से नहीं पहचान पाते। वाल्टर वेन्यामिन के अनुसार अगर पेरिस उन्नीसवीं सदी की राजधानी थी तो न्यूयार्क बीसवी सदी की राजधानी है। मार्ती का चिंतन और लेखन हवाना, मेक्सिको सिटी, काराकास और यहां तक कि ब्यूएनोसएरेस में भी संभव न था। उसके लिए न्यूयार्क की प्रेरणा अथवा उत्तेजना आवश्यक थी। मैंने बहुत पहले लिखा था कि मार्ती अमेरिका की मूलगामी चिंतन परम्परा के एक प्रतिनिधि हैं। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि अभी हाल मे प्रकाशित 'अमेरिकी वामपंथ का विश्वकोश' (एन्साइक्लोपीडिया आफ द अमेरिकन लेफ्ट') में मार्ती को भी स्थान मिला है। यह पर्याप्त नहीं है, फिर भी इससे उम्मीद बनती है कि भविष्य में मार्ती के विचारों का बेहतर मूल्यांकन होगा। मार्ती केवल क्यूबा की क्रान्ति के बौद्धिक जनक ही नहीं थे, बल्कि उन्होंने अमेरिकी समाज का भी जितनी गहराई और लगन के साथ अध्ययन और विश्लेषण किया है वह अद्वितीय है। प्रसिद्ध आलोचक ख़ोसे देविद साल्दीवार ने अपनी पुस्तक 'हमारे अमेरिका की द्वन्द्वात्मकता' ('डायलेक्टिक्स आफ ऑवर अमेरिका') में लिखा है कि मार्ती के विचारों का विकास अमेरिका की संस्कृति और साहित्य की विकासशील प्रवृत्तियों से जुड़ा हुआ है। साल्दीवार ने मुझे भी उस परम्परा में रखा है। मैं स्वयं भी अपने को उस परम्परा का हिस्सा समझता हूँ।

डायना और बेवरली : अमेरिका की संस्कृति और साहित्य की विकासशील प्रवृत्तियों से उस समुदाय का गहरा रिश्ता है जिसे अमेरिका में लातीनी समुदाय कहा जाता है, उसका एक बहुत बड़ा हिस्सा क्यूबाइयों का है। लेकिन वे क्यूबाई, क्यूबा की क्रान्ति और

आपकी सांस्कृतिक साहित्यिक योजना के विरोधी हैं। 1959 के बाद जो क्यूबाई अमेरिका में जाकर बस गये है उनसे क्यूबा के सम्बन्ध के भविष्य के बारे में आप क्या सोचते हैं? क्या आप अमेरिका में रहने वाले क्यूबाइयों की रचनाओं और आलोचनाओं को पढ़ते रहे हैं?

रेतामार : अमेरिका में रहने वाले क्यूबाई लोगों से क्यूबा वालों के सम्बन्ध का भविष्य बहुत कुछ उस राजनीतिक वास्तविकता पर निर्भर है जिसे हम अपने मन के मुताबिक ढाल नहीं सकते। जहां तक मेरी बात है मैं उस सम्बन्ध को अधिक से अधिक विकसित होते देखना चाहता हूँ और मेरा विश्वास है कि ऐसा होगा। अमेरिकी नाकेबदी के कारण अमेरिका से क्यूबा में साहित्य का आना लगभग बन्द सा हो गया, इसलिए मै अमेरिका में रहने वाले नई पीढ़ी के क्यूबाइयों के लेखन से उतना परिचित नहीं हूँ जितना होना चाहता हूँ। येल में पढ़ाने वाले गोंजालेज़ एचेवारिआ के साथ मेरे वर्षों से अच्छे सम्बन्ध हैं। मैंने उनका जितना आलोचनात्मक लेखन पढ़ा है वह मुझे पसन्द है। उन्होंने मेरा एक साक्षात्कार लिया था। और मेरे बारे में एक प्रशंसात्मक लेख भी लिखा था वह सारी सामग्री 1978 में 'डाइक्रिटिक्स' नामक पत्रिका में छपी थी। उन्होंने कार्पेतियेर पर लिखी अपनी पुस्तक मुझे समर्पित की है। वे अपनी किताबें मेरे पास भेजते हे। इधर मुझे मालूम हुआ है कि अब मेरे प्रति उनका उत्साह पहले जैसा नहीं है, यद्यपि मै अब भी वहीं हूँ जो पहले था।

मैं बहुत पहले अना मेन्दिएता से मिला था। मैं उनकी कला का बहुत प्रशंसक हूँ। 1980 के दशक में कलाकारों की जो पीढी क्यूबा में उभरकर सामने आई है उस पर उनका गहरा प्रभाव है। हमने कुछ दिन पहले ही 'कासा दे लास् अमेरिकास्' मे अना की असामयिक और दुखद मृत्यु पर नान्सी मोरखेन की एक बहुत अच्छी कविता छापी थी। मैं ओस्कर ईख़्रएलास अथवा उनके लोकप्रिय उपन्यास 'माम्बो राजा' के बारे में नहीं जानता हूँ, लेकिन मैंने क्रिस्तिना गार्सिया की रचना 'क्यूबा में सपना' (ड्रीमिंग इन क्यूबन) पढ़ी है। वह मुझे बहुत पसंद आई। उसे पढ़ते हुए मेरे सामने बराबर यह सवाल रहा कि क्या वह अंग्रेजी में लिखा गया क्यूबाई उपन्यास है या क्यूबाइयों के बारे मे लिखा अमेरिकी उपन्यास?

नाकेबन्दी के बावजूद मैं अमेरिका में रहने वाले अपने क्यूबाई मित्रों और साथियों से बराबर सम्पर्क बनाए रखता हूँ। मैं पहले ही एउखेनिओ फ्लोरित की चर्चा कर चुका हूँ। मैं उनसे कई सालों से नहीं मिला हूँ लेकिन उनकी कविताओं का प्रशंसक जरूर हूँ। स्वर्गीय लाउर्देस कासाल की जीवंत और अविस्मरणीय उपस्थिति का जितना

तीव्र अनुभव अमेरिका में था उतना ही क्यूबा मे भी। मुझे नई पीढ़ी के उन लोगो के नाम याद आ रहे हैं जिनकी रचनाएं हमारी पत्रिका में छपी हैं या जो हवाना आकर हमसे मिल चुके हैं। ऐसे लोगों में एमिलिओ बेखेल एलियाना रिबेरो, खुलिओ रोद्रीगेज लुईस ऐरिके सासेरीओ गारी, ओस्कार मोंतेरो, खेसुस बार्केत और रूथ बेहार'विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। रूथ बेहार की अत्यन्त महत्वपूर्ण और प्रभावशाली रचना 'अनूदित औरत' ('ट्रान्सलेटेड वोमन') की समीक्षा हमारी पत्रिका में छपी है।मैं क्यूबा और अमेरिका के क्यूबाइयों के बीच सम्वाद बनाये रखने की हरसंभव कोशिश करता हूँ।

हमारे यहाँ आत्मालोचन और भविष्य के प्रति खुलेपन की जो प्रवृत्ति विकसित हो रही है उसकी प्रभावशाली अभिव्यक्ति सुप्रसिद्ध निर्देशक तोमास गुतिऐरेज आलेया की फिल्म 'स्ट्राबेरी एण्ड चॉकलेट' में हुई है जो सेनेल पॉज़ की कहानी पर आधारित है। इस फिल्म में अब तक साहित्य तथा कला के लिए निषिद्ध समलैंगिक सम्बन्ध की अभिव्यक्ति है और क्यूबाई समाज में सहनशीलता तथा भेदभाव की स्थितियों से जुडे प्रश्नों का सामना करने की कोशिश भी है। आज से पचास वर्ष पहले जब गुतिएरेज आलेया मेरे साथ छात्र था तब वह मेरी रचनाओं का पहला सम्पादक भी था।

कुछ समय पहले तक राजनीतिक भावनाएं बहुत उग्र थीं इसलिए क्यूबा के लोगों से अमेरिका में रहने वाले प्रवासी क्यूबाइयों के सम्बन्धों में तनाव अधिक था। अब उन दोनो के बीच संवाद की संभावना बढ़ रही है। **आज खाड़ी के दोनों ओर से खुआन गेलमान के शब्दों में यह आवाज उठने वाली है कि अन्ततः कोई भी निर्दोष नही ह।**

> **डायना और बेवरली :** अब तक हम बहुत कुछ खो चुके हैं, हमारी महत्वाकांक्षायें और आशायें धूल में मिल चुकी हैं, हमारे संघर्ष और हमारे त्याग की या तो पराजय हो चुकी है या उनके सामने प्रश्नचिह्न लग गए हैं। ऐसी स्थिति में क्या आपके मन में उनामुनो के शब्दों से जीवन के प्रति कोई त्रासद बोध पैदा हो रहा है?

रेतामार : इस प्रश्न से इस साक्षात्कार का अंत करना मुझे बहुत सार्थक लग रहा है। **ऐसा इसलिए नही है कि मैं पराजय और निराशा से घिरा हूँ, बल्कि इसलिए कि उनामुनो के चिंतन से मेरा पुराना और गहरा सम्बन्ध रहा है।** जब मैं किशोर था तब मैं मार्ती और खुलीयान देल कासाल के बाद उनामुनो के विचारों से ही सबसे अधिक प्रभावित था। खुलीयान देल कासाल ने 1943 में मेरे लिए कविता की दुनिया में प्रवेश का रास्ता दिखाया और उनामुनो की पुस्तक 'मेरा धर्म तथा अन्य निबंध' ('माइ रिलीजन एण्ड अदर एसेज') के माध्यम से मैंने विचारों की दुनिया में प्रवेश किया। वास्तव में

मैने उनामुनो की पुस्तक 'दोनक्वीहोते और सांको का जीवन' ('लाइफ आफ दोनक्वीहोते एण्ड सांको') को समझने के लिए ही सेर्वांतिज का उपन्यास 'दोनक्वीहोते' पढ़ा था।

उनामुनो की पुस्तक 'जीवन के त्रासद बोध के बारे में' ('आन द ट्रैजिक सेन्स आफ लाइफ') प्रथम विश्वयुद्ध के एक वर्ष पहले और अक्टूबर क्रान्ति के चार वर्ष पूर्व 1913 में छपी थी। उस पुस्तक का सम्बन्ध अपने समय के गंभीर ऐतिहासिक संदर्भों से उतना नहीं था जितना पास्कल और कीर्केगार्द के चिंतन से। **मैं जीवन के त्रासद बोध का महत्व स्वीकार करता हूँ, लेकिन उन कारणों से नहीं जिनका आपके प्रश्न में उल्लेख है। यह ठीक है कि यदि समाजवादी मरणशील हैं तो पूंजीवादी भी नश्वर हैं।** जब उनामुनो विवेक और अविवेक की बात करते हैं तब वे हाड़मांस के पुतले मनुष्य की चिन्ता करते हैं और जब वे मृत्यु से संवाद का प्रयत्न करते हैं, तब वे उन द्वैतों से परे जाने का प्रयास करते हैं जिन्हें वे बुनियादी नहीं मानते। मेरे लिए यह कहना मुश्किल है कि उनकी यह चिंता सही है या गलत। **इस प्रसंग में एंगेल्स की बात मुझे याद आ रही है। समाज के ऐतिहासिक विकास की विभिन्न अवस्थाओं से सम्बन्धित मार्क्स और एंगेल्स की मान्यताओं पर यांत्रिकता और भोलेपन का आरोप लगाते हुए जब कुछ लोगो ने कहा कि लगता है विकास की उन विभिन्न अवस्थाओं को पार करने के बाद मनुष्य दिव्य दर्शन से उपजा परमानंद पा लेगा तब उन आलोचनाओं का जवाब देते हुए एंगेल्स ने कहा था कि मैंने या मार्क्स ने कहीं भी ऐसा नही लिखा है कि मनुष्य दुःखी प्राणी नहीं है। यूनानी तथा शेक्सपीयर के दुःखान्त नाटको के परम प्रेमी मार्क्स और एंगेल्स ऐसा कैसे कह सकते थे।** इस प्रसंग में यह भी याद रखना जरूरी है कि उनामुनो जवानी में समाजवादी था और वह मार्ती के महत्व को समझने वाला पहला स्पेनी बुद्धिजीवी था। उसने यह स्वीकार किया है कि उसे पीड़ा के महत्व का बोध मार्ती को पढकर हुआ। लातीनी अमेरिका के ओर्तीज, मारियाते गुई, बोर्खेज़ और मार्तीनेज एस्त्रादा जैसे बुद्धिजीवी उसके परम प्रशंसक रहे हैं।

यद्यपि उनामुनो के चिंतन में बहुत अन्तर्विरोध है, लेकिन बुनियादी बातों के बारे में उनकी राय प्रायः सही रही है। वे ऐतिहासिक संकट के समय अत्यन्त साहस के साथ व्यवहार करने वाले व्यक्ति थे। उन्होंने 1920 के दशक में दे रिवेरा की तानाशाही का जमकर विरोध किया था जिसके कारण उन्हें देश निकाले का दंड भोगना पड़ा। यही नहीं उन्होंने 1936 के अपने प्रसिद्ध भाषण में स्पेन में फ्रेंको के विद्रोह का विरोध किया था। उस समय वे सालामांका विश्वविद्यालय के रेक्टर थे। उस व्याख्यान के एक महीने के बाद ही उनका देहांत हो गया।

आपने अपने सवाल में जिन दुखद परिस्थितियों का जिक्र किया है उन्हे अस्तित्ववादी शब्दावली में सीमांत स्थितियां कहा जा सकता है। लेकिन मुझे लगता है कि जीवन की दुखद स्थिति का बोध उससे आगे जाता है। मैं मानता हूँ कि मेरे मन में जीवन के दुखद होने का बोध है, लेकिन अब जबकि मैं जीवन के अंत की ओर बढ़ रहा हूँ तब मुझे इस बात का संतोष भी है कि जवानी के दिनों के मेरे बौद्धिक प्रेम के आलम्बन संसार में गायब नही हो गए है। मार्ती के विचार आज भी मेरे साथ है, कविता के दरवाजे अब भी मेरे लिए खुले हैं, मेरी चिंताएं उनामुनो की चिंताओं से जुड़ी हुई हैं और जिस जार्ज बर्नाड शॉ ने मुझे रोमांटिक समाजवादी बनाया था वे अब भी मुझे याद आते है। मैं जानता हूँ कि आजकल ऐसी बातें बौद्धिक फैशन से बाहर है। क्या यह अच्छी बात है या बुरी ? मैं जरूर कहूँगा कि फैशन से अधिक तुच्छ और जल्दी से जल्दी बदलने वाली कोई और चीज नहीं होती। मृत्यु ऐसी तुच्छता से बहुत अलग होती है। यही नहीं, वे सारी बातें इस दायरे से बाहर होती हैं जो उम्मीद और दुःख का सचमुच कारण बनती हैं।

1959 में मेरा एक काव्य संग्रह छपा था जिसका नाम है– 'प्राचीन आशा की वापसी' हम जिस कठिन समय का सामना कर रहे हैं उसमें निराशा के बहुत से कारण हैं, लेकिन मैं आशा को अलविदा नही कहने जा रहा हूँ। मैं यह नहीं सोचता कि जिसे रेमंड विलियम्स आशा के स्रोत कहते हैं, वे कभी पूरी तरह सूख जायेंगे।







मैनेजर पाण्डेय

जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में
भारतीय भाषा केन्द्र में प्रोफ़ेसर।
इससे पूर्व बरेली कॉलेज तथा
जोधपुर विश्वविद्यालय में अध्यापन।

प्रकाशित कृतियाँ

- भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य
- शब्द और कर्म
- साहित्य और इतिहासदृष्टि
- साहित्य के [illegible] की भूमिका